संगीत के क्षेत्र में व्यवसाय के विभिन्न आयाम

डॉ0 गीता शर्मा

असि0 प्रोफे0 एवं विभागाध्यक्ष, संगीत विभाग,
जैन कन्या पाठशाला (पी0जी0) कॉलिज,
मुजफ्फरनगर

Email:kumar_shwetank18@yahoo.com

Reference to this paper should be made as follows:

डॉ0 गीता शर्मा,

संगीत के क्षेत्र में व्यवसाय के विभिन्न आयाम

Artistic Narration
Dec. 2019, Vol. X No.2
pp.123-130

https://anubooks.com/?page_id=6393

सारांश

गायन, वादन और नृत्य की समन्वयात्मक संज्ञा संगीत है। संगीत आदि–काल से ही भारतीय संस्कृति का प्रमुख एवं महत्वपूर्ण अंग रहा है। हमारे आदि देवी–देवताओं के साथ संगीत का सम्बन्ध इस बात को प्रमाणित करता है कि संगीत का मूल विषय आध्यात्मिकता ही रहा है, परन्तु कालान्तर में यह परिवर्तित होते होते मानव की आध्यात्मिक भावनाओं के साथ–साथ सामाजिक, श्रृंगारिक, रंजनात्मक एवं व्यावसायिक प्रवृत्तियों एवं भावनाओं को भी आधार प्रदान करने लगा। निःसंदेह ही मध्य काल में संगीत में विभिन्न प्रभावों से श्रृंगारिकता का आधिपत्य हो गया था, किन्तु किसी–न–किसी रूप में आध्यात्मिकता भी उस काल में किंचिन्मात्र ही सही परन्तु अवश्य व्याप्त थी। इसके विपरीत आधुनिक काल में प्राचीन समय से चली आ रही कुछ बन्दिशों में शाब्दिक आध्यात्मिकता के दर्शन तो भले ही होते हों, परन्तु सूक्ष्म रूप से देखा जाए तो स्पष्ट हो जाता है कि आज के संगीत की आत्मा में आध्यात्मिकता का सर्वथा अभाव है। भारत ने स्वतन्त्र होकर जब से अपनी राष्ट्रीय सरकार स्थापित की है, तब से संगीत का प्रचार एवं प्रसार द्रुत गति से बढ रहा है।

प्रस्तावना

संगीत को विद्यालयों, महाविद्यालयों एवं विश्वविद्यालयों में स्वतन्त्र रूप से एक शिक्षण के विषय के रूप में ग्रहण कर लिया गया है। विद्यालयों व महाविद्यालयों में निर्धारित पाठ्यक्रमानुसार इसकी शिक्षा लगभग सौ वर्ष पूर्व ही आरम्भ हो गई थी। इस विषय में प्राथमिक व माध्यमिक शिक्षा से लेकर एम0ए0, पीएच0डी0, डी0 म्यूज0 तथा डी0लिट्0 तक की उपाधियाँ प्रदान की जाने लगी हैं। सही मायने में अगर संगीत के किसी पक्ष में विकास हुआ है, तो वह सुगम संगीत है। वाद्य के क्षेत्र में भी संगीत का काफी विकास देखने को मिलता है। संगीत से सम्बन्धित यह व्यवसाय भी काफी सार्थक सिद्ध हो रहा है। विद्यालयों में संगीत की सामान्य षिक्षा के प्रावधान से कई लाभ होंगे, जिनमें सर्वोपरि यह होगा कि बच्चों के व्यक्तित्व का सर्वांगीण विकास सम्भव होगा जिससे समाज सु–संस्कृत होगा और मानवीय मूल्यों का पतन जो आज दिखाई देता है वह उत्कृष्ट अभिरूचि के विकास के साथ कुछ सीमा तक नियंत्रित हो सकेगा। यदि हम पं0 विष्णुदिगम्बर पलुस्कर व पं0 विष्णुनारायण भातखण्डे के प्रयत्नों के प्रति श्रद्धावान् हैं तो आज हमें समाज की आवश्यकता को देखते हुए सभी विद्यालयों में भारतीय संगीत की सामान्य शिक्षा की समुचित व्यवस्था के लिए हर सम्भव प्रयास करना होगा। राज्य सरकारों के शिक्षा विभागों को इस दिशा में प्रयत्नशील होना चाहिए, जिससे हम सब इस लक्ष्य की प्राप्ति कर एक स्वर्णिम भविष्य की ओर अग्रसर हों एवं संगीत में व्यवसायिक दृष्टि से भी अनेकानेक अवसरों की प्राप्ति हो सके। गायन, वादन और नृत्य की समन्वयात्मक संज्ञा संगीत है। संगीत आदि–काल से ही भारतीय संस्कृति का प्रमुख एवं महत्वपूर्ण अंग रहा है। हमारे आदि देवी–देवताओं के साथ संगीत का सम्बन्ध इस बात को प्रमाणित करता है कि संगीत का मूल विषय आध्यात्मिकता ही रहा है, परन्तु कालान्तर में यह परिवर्तित होते होते मानव की आध्यात्मिक भावनाओं के साथ–साथ सामाजिक, श्रृंगारिक, रंजनात्मक एवं व्यावसायिक प्रवृत्तियों एवं भावनाओं को भी आधार प्रदान करने लगा। वैदिक काल में इसी संदर्भ में सामगान और देशी अथवा लोक–संगीत–दोनों के प्रचलित होने के प्रमाण मिलते हैं। मुख्य रूप से समाज का ब्राह्मण–वर्ग प्राचीन समय से ही विभिन्न सांस्कृतिक, सामाजिक एवं धार्मिक कर्मकाण्डों से सम्बन्धित रहा है और ऐसे अनेक साक्ष्य भी उपलब्ध हुए हैं, जिनके आधार पर यह कहा जा सकता है कि इन सामाजिक, धार्मिक एवं सांस्कृतिक कृत्यों में संगीत का व्यवहार अनिवार्य रूप में होता था। यह सर्वविदित ही है कि कोई भी व्यक्ति, परिवार, समाज अथवा वर्ग अपनी आजीविका के लिए किसी–न–किसी कार्य को व्यवसाय के रूप में अवश्य ग्रहण करता है। अतः प्राचीन अथवा हमारी संस्कृति के आदि–काल में ही संगीत का व्यवहार एक विशिष्ट वर्ग, जाति अथवा सम्प्रदाय के द्वारा व्यावसायिक रूप में होना स्वाभाविक ही जान पड़ता है। इसी काल अथवा संगीत की स्थिति को हम संगीत के व्यवसायिक पक्ष का उद्भव अथवा आरम्भिक काल मान सकते हैं। कालान्तर में संगीत से सम्बन्धित विभिन्न व्यवसायी जातियाँ अथवा सम्प्रदाय भी प्रकाश में आने लगे। इन विशिष्ट जाति अथवा सम्प्रदायों में भी आगे विभिन्न वर्गों का निर्माण होने लगा। कुछ लोगों ने संगीत को पूर्णतः व्यवसाय के रूप में अपनाया और कुछ लोगों ने संगीत की आत्मास्वरूप उसकी आध्यात्मिकता को सुरक्षित रखते हुए, परमात्मा की आराधना को ही लक्ष्य में रखा, परन्तु अगर सूक्ष्म रूप से विश्लेषण किया जाए तो पता चलता है कि कहीं–न–कहीं इनकी आजीविका का आधार भी संगीत ही था। कालान्तर में विभिन्न सामाजिक, सांस्कृतिक प्रभावों के कारण संगीत के

इस द्वितीय वर्ग का लोप होने लगा और संगीत विभिन्न मन्दिरों एवं देवालयों से निकलकर राजाओं, सम्राटों व जमींदारों अथवा उच्च वर्ग के लोगों की प्रशस्ति एवं मनोरंजन का साधन बन गया। ये लोग कलाकारों को उचित वेतन देकर अपनी राज–सभाओं में नियुक्त करते थे। अतः इस काल में संगीत पूर्णतः एक व्यावसायिक कार्य के रूप में उभरकर सामने आया। राष्ट्रीय भारतीय संगीत को जन्म देने का श्रेय अकबर को मिला है।[1]

निःसंदेह ही मध्य काल में संगीत में विभिन्न प्रभावों से श्रृंगारिकता का आधिपत्य हो गया था, किन्तु किसी–न–किसी रूप में आध्यात्मिकता भी उस काल में किंचिन्मात्र ही सही परन्तु अवश्य व्याप्त थी। इसके विपरीत आधुनिक काल में प्राचीन समय से चली आ रही कुछ बन्दिशों में शाब्दिक आध्यात्मिकता के दर्शन तो भले ही होते हों, परन्तु सूक्ष्म रूप से देखा जाए तो स्पष्ट हो जाता है कि आज के संगीत की आत्मा में आध्यात्मिकता का सर्वथा अभाव है। यहां संगीत का मुख्य उद्देश्य पूर्णतः परिवर्तित दिखाई देता है। परन्तु क्योंकि परिवर्तन प्रकृति का गुण अथवा नियम है, अतः संगीत जगत को भी इस परिवर्तन को स्वीकार करना चाहिए। ऐसा करने पर ही संगीत का समुचित विकास एवं प्रत्येक वर्ग में व्यवहार हो पाना सम्भव हो सकेगा। आधुनिक काल में संगीत–काल मूल रूप से केवल व्यवसाय के रूप में ही विकसित हो रही है। अगर मन्दिरों में भी अच्छे गायक–वादक भगवान का गुणगान करते हैं तो भी उनका मूल उद्देश्य अर्थार्जन ही होता है। इसके साथ ही मन्दिरों में जो औरतें नित्य भजन व कीर्तनआदि के लिए नियुक्त होती हैं, उनको भी यथोचित आर्थिक सहायता प्रदान की जाती है। प्रातः और सांय जो भजन एवं कीर्तन आदि के रिकॉर्ड मन्दिरों में बजते हैं, उनको भी बाजार से खरीदा जाता है।

भारत ने स्वतन्त्र होकर जब से अपनी राष्ट्रीय सरकार स्थापित की है, तब से संगीत का प्रचार एवं प्रसार द्रुत गति से बढ रहा है।[2] संगीत को विद्यालयों, महाविद्यालयों एवं विश्वविद्यालयों में स्वतन्त्र रूप से एक शिक्षण के विषय के रूप में ग्रहण कर लिया गया है। विद्यालयों व महाविद्यालयों में निर्धारित पाठ्यक्रमानुसार इसकी शिक्षा लगभग सौ वर्ष पूर्व ही आरम्भ हो गई थी। इस विषय में प्राथमिक व माध्यमिक शिक्षा से लेकर एम0ए0, पीएच0डी0, डी0 म्यूज0 तथा डी0लिट्0 तक की उपाधियाँ प्रदान की जाने लगी हैं। जगह–जगह विद्यालयों, महाविद्यालयों एवं विश्वविद्यालयों में कुलीन घरानों के युवक–युवतियाँ संगीत की शिक्षा ग्रहण कर रहे है। जनसाधारण में भी संगीत के प्रति अभिरूचि उत्पन्न हो रही है। आधुनिक अथवा वर्तमान काल में संगीत को व्यवसायिक दृष्टि से मुख्य रूप से दो वर्गों में विभाजित किया जा सकता है– शिक्षण–पक्ष एवं क्रियात्मक पक्ष। शिक्षण पक्ष से हमारा अभिप्राय यहां संगीत की संस्थागत शिक्षण प्रणाली से है। इसके अर्न्तगत संगीत से सम्बन्धित विद्यार्थी के लिए व्यावसायिक दृष्टि से विद्यालयों, महाविद्यालयों एवं विश्वविद्यालयों के साथ–साथ विभिन्न सरकारी एवं गैर सरकारी संस्थाएँ भी महत्वपूर्ण स्थान रखती है। निजी स्तर पर चल रहे विभिन्न संस्थानों को भी हम इसी वर्ग में रख सकते हैं।

''संगीत'' शैक्षणिक स्तर पर अभी तक नवीन विषय है। इसलिए इसके शिक्षण पक्ष में अभी तक जो कार्य हो पाया है, निःसंदेह ही वह अतिमहत्वपूर्ण एवं प्रशंसनीय है, परन्तु अभी इसमें अत्यधिक सम्भावनाएं हैं। दूसरी ओर, संगीत का क्रियात्मक पक्ष भी व्यावसायिक दृष्टि से विभिन्न सम्भावनाओं से

युक्त है। यहाँ क्रियात्मक पक्ष से हमारा अभिप्राय संगीत के उस क्षेत्र से है, जिसमें कोई कलाकार अपने प्रयासों से संगीत के किसी एक वर्ग, यथा–शास्त्रीय संगीत, अर्थशास्त्रीय संगीत, सुगम संगीत, पाश्चात्य संगीत, लोक संगीत, चित्रपट–संगीत आदि विभिन्न क्षेत्रों में से एक या अधिक को व्यावसायिक दृष्टि से ग्रहण करता है। अगर संगीत से सम्बन्धित उच्चाधिकारी, संगीत शिक्षक एवं संगीत शोधार्थी संगीत के शिक्षक एवं क्रियात्मक दोनों पक्षों में उचित समन्वय स्थापित करने का प्रयास करें, तो संगीत का व्यावसायिक स्तर किसी भी अन्य विषय की तुलना में कम नही रहेगा।[3] वर्तमान में संगीत शिक्षण संस्थाओं में संगीत एक सम्माननीय व्यवसाय के रूप में विकसित हो रहा है। प्राथमिक शिक्षा से सम्बन्धित विद्यालयों से लेकर विश्वविद्यालय तक की शिक्षण संस्थाओं में संगीत के विद्यार्थियों को एक शिक्षक के रूप में रोजगार भी प्राप्त हो रहे हैं। इसके साथ ही विभिन्न गैर सरकारी संस्थाओं के माध्यम से भी विभिन्न लोगों को रोजगार प्राप्त हो रहे हैं। परन्तु यह कहना भी गलत न होगा कि आज भी ऐसे अनेक विद्यालय एवं विश्वविद्यालय हैं, जिनमें संगीत को एक शैक्षणिक विषय के रूप में पूर्णतः मान्यता प्राप्त नहीं हो सकी है। इसके साथ ही ऐसे भी अनेक विद्यालय एवं विश्वविद्यालय हैं, जिनमें संगीत को एक विषय के रूप में स्वीकार तो कर लिया गया है, परन्तु उसको उचित सम्मान नहीं प्राप्त हो सका है। बहुत से ऐसे भी विद्यालय हैं, जिनमें अध्यापक ही नियुक्त नहीं हो पाए हैं और ऐसे भी अनेक विद्यालय हैं, जिनमें ऐसे लोगों को शिक्षक के पद पर नियुक्त कर दिया जाता है, जिनको न तो विषय की उचित जानकारी होती है और न ही एक सभ्य व्यक्ति के संस्कारों की। ऐसे शिक्षकों का प्रभाव समाज एवं विद्यार्थियों पर विपरीत ही पड़ता है। इसका परिणाम यह होता है कि समाज में संगीत एवं संगीत से सम्बन्धित लोगों की छवि गिरने लगती है। अतः संगीत के शिक्षक के पद इस प्रकार के अयोग्य एवं अशिक्षित लोगों का नियुक्त होना बहुत ही घातक एवं हानिप्रद है। संगीत से सम्बन्धित विधानों का यह परम कर्तव्य है कि वे संगीत को आहत एवं पतनोन्मुख करने वाले इस प्रकार के हानिकारक तत्वों से बचाएँ और इसको विकास की ओर अग्रसर करने के लिए यथासम्भव प्रयास करें।

आधुनिक अथवा वर्तमान काल में संगीत से सम्बन्धित कुछ विद्यालयों एंव विश्वविद्यालयों की संख्या में वृद्धि तो अवश्य हुई है, परन्तु आज भी अनेकों ऐसे विद्यालय अथवा विश्वविद्यालय हैं, जिनमें इस विषय का प्रवेश नहीं हो पाया है। ग्रामीण अंचल से सम्बन्धित विद्यालयों और विश्वविद्यालयों में तो इनकी संख्या बिलकुल ही कम अथवा नाममात्र ही है। साधारणतः ऐसा भी माना जाता है कि जो विद्यार्थी संगीत विषय से विद्यालय या महाविद्यालय स्तर पर जुड़ते हैं, उनमें से 90 प्रतिशत का उद्देश्य अंक प्राप्त करना होता है। स्नातकोत्तर स्तर पर इस विषय में प्रवेश लेने वालों में लड़कों के अनुपात में लड़कियों की संख्या अधिक होती है, जो आजकल कुछ नियमित भी होने लगी हैं। इनमें से अधिकतर विद्यार्थी वे होते हैं, जिनको अन्य कहीं प्रवेश प्राप्त नहीं होता। जो विद्यार्थी संगीत को एक विषय के रूप में चुनते हैं, उनमें से अधिकतर के पूर्वज संगीत से सम्बन्धित होते हैं। सामान्य विद्यार्थियों में से अधिकतर विद्यार्थी सुगम संगीत से प्रभावित होकर इस विषय को चुनते हैं, परन्तु जब उनका सामना विश्वविद्यालय की शिक्षण पद्धति से होता है, तो उनका यह भ्रम शीघ्र ही टूट जाता है कि वे कोई बड़े गायक, वादक या नर्तक बनेंगे। इस स्थिति में आकर कुछ विद्यार्थी, जो सक्षम होते हैं, विशय का परिवर्तन कर लेते हैं, किन्तु कुछ चाहते हुए भी ऐसा नहीं कर पाते हैं। परिणामस्वरूप इन विद्यार्थियों का भविष्य अंधकारमय हो जाता

है।

विभाग अथवा विषय के संचालकों को इस विषय पर गम्भीरता से चिंतन करना चाहिए और विद्यार्थियों को शिक्षा देने के साथ–साथ उनके लिए रोजगार के उचित साधनों को जुटाने का प्रयास भी करना चाहिए। जो विषय रोजगार के उचित साधन जुटाने में बिलकुल ही सक्षम नहीं है ऐसे विषय विद्यार्थियों के भविष्य को खराब कर देते हैं। अतः ऐसे विषयों अथवा पाठ्यक्रमों के बारे में प्रशासन को गहनता से विचार करना चाहिए। और इस प्रकार की समस्याओं का निदान करना संगीत एवं शैक्षणिक प्रशासन के अधिकारियों का परम कर्तव्य होना चाहिए। सरकारी अथवा गैर सरकारी संस्थाओं में संगीत के शिक्षकों का जो स्तर होता है, उसको शिक्षक ही अच्छी तरह समझते हैं। कई बार तो इन शिक्षकों को सामान्य मीटिंगों में भी नहीं बुलाया जाता। विद्यालय स्तर पर जो शिक्षक गैर सरकारी स्कूलों में शिक्षण करते हैं, वे शिक्षक कम और हारमोनियम वादक अधिक होते हैं। बहुत से स्कूलों में तो वे अनपढ लोग संगीत की शिक्षा दे रहे होते हैं, जो रात को जागरणों में काम करते हैं या अन्यत्र कहीं निम्न स्तर पर संगीत के माध्यम से जीविकोपार्जन करते हैं। इनकी योग्यता को एक स्नातकोत्तर या पीएच0डी0 के विद्यार्थी से अधिक भी कई बार आंका जाता है। वैज्ञानिकों, तकनीकी विशेषज्ञ, डॉक्टर तथा राजनीतिज्ञों के समान समाज में संगीतज्ञों का कोई विशेष स्थान नहीं बन पा रहा है। संगीत का व्यवसाय कुछ लोगों के लिए सभ्य और प्रतिष्ठित जरूर हो गया है, किन्तु पेशेवर लोगों को अब भी लोग तिरस्कार की दृष्टि से ही देखते हैं।

संगीत के क्रियात्मक पक्ष में भी अनेक प्रकार की अनियमितताएँ देखने को मिलती हैं। शास्त्रीय संगीत के संदर्भ में यह बडी विडम्बना है कि संगीत का यह पक्ष बड़ा ही श्रम एवं समय–साध्य होने पर भी बहुत अधिक अर्थ एवं प्रसिद्धि प्राप्त करवाने में सक्षम नही हो पाता है। बहुत अच्छा गायक भी अगर कम आयु का हो तो उसको भी एक सफल अथवा सम्पूर्ण गायक के रूप में पूर्णतः मान्यता नहीं मिल पाती है। एक सफल एवं निपुण शास्त्रीय गायक के लिए काफी अनुभव एवं आयु की अपेक्षा की जाती है। इसके साथ ही शास्त्रीय संगीत के अच्छे गायक भी अर्थ अर्जन में उतने सफल नहीं हो पाते, जितने कि सुगम, फिल्मी एवं लोक संगीत से सम्बन्धित सामान्य गायक अथवा कलाकार होते हैं। शास्त्रीय संगीत के अच्छे अथवा चोटी के कलाकारों की ख्याति भी एक विशिष्ट वर्ग अथवा समाज तक ही हो पाती है। आम समाज में इन कलाकारों को लगभग न के बराबर ही जाना जाता है। अतः संगीत के विद्वानों के लिए इस प्रकार के विषय चिन्तनीय होने चाहिए। संगीत के विद्वानों को भी चाहिए कि वे शास्त्रीय संगीत में ऐसी विशेषताएँ उत्पन्न करें जिससे शास्त्रीय संगीत विशिष्ट समाज अथवा वर्ग की वस्तु न रहकर सम्पूर्ण समाज में अपनी पहचान बना सके और अर्थ एवं प्रसिद्धि दोनों को अर्जित करने में पूर्णतः सफल सिद्ध हो सके।[4]

सुगम संगीत अथवा फिल्मी संगीत आज एक बहुत बड़े एवं स्थायी व्यवसाय के रूप में उभरकर सामने आया है। अनेकों गायक, वादक तथा सहगायक, सहवादक आदि अपनी आजीविका का अर्जन संगीत के माध्यम से सम्मानपूर्वक कर रहे हैं। विभिन्न कैसेट एवं रिकॉर्ड कम्पनियाँ तथा विभिन्न दूरदर्शन एवं रेडियो–चैनल पूर्णतः संगीत के कार्यक्रमों पर ही आधारित हैं और सफलतापूर्वक अर्थ एवं प्रसिद्धि प्राप्त कर रहे हैं। परन्तु इस क्षेत्र में भी काफी भ्रान्तियाँ हैं। बहुत से चैनल केवल धन अर्जन के लिए

नौजवानों को भ्रमित भी कर रहे हैं। ये नौजवान प्राकृतिक रूप से ईश्वर द्वारा प्रदान की गई अच्छी आवाज के कारण कुछ फिल्मी अथवा सुगम संगीत के गीत तो गा लेते हैं, परन्तु संगीत की विधिवत् शिक्षा न लेने के कारण अथवा संगीत का आधारभूत ज्ञान न होने के कारण शीघ्र लुप्त हो जाते हैं। अतः इस प्रकार के कार्यों से कुछ लोगों का व्यवसायिक दृष्टि से काफी लाभ तो हो रहा है, परन्तु बहुत से लोगों का भविष्य भी अंधकारमय हो रहा है।

इस संदर्भ में संगीत के वरिष्ठ विद्धानों का कर्तव्य बनता है कि संगीत के ऐसे कार्यक्रमों अथवा चैनलों को एक नियमित व्यवस्था प्रदान करने में उनका सहयोग करें। तथा उचित एवं संगीत का आधारभूत ज्ञान रखने वाले विद्यार्थियों अथवा लोगों का ही चुनाव करें और उन्हें आगे बढने का अवसर प्रदान करें। इसके साथ ही विशिष्ट चैनलों एवं कंपनियों को भी चाहिए कि वे इस प्रकार के कार्यक्रमों के संचालन में संगीत एवं संगीत–व्यवसाय से सम्बन्धित वरिष्ठ अथवा अनुभवशील विद्वानों का सहयोग लें। इसके साथ ही शास्त्रीय एवं लोक संगीत, सुगम संगीत और फिल्मी संगीत में एक उचित समन्वय स्थापित करके व्यवसायिक एवं सामाजिक दृष्टि से और अधिक उपयोगी बनाया जा सकता है। शास्त्रीय नृत्य के विकास में चल रहे कार्य सार्थक परिणाम लाने में उतने सफल नहीं हैं, जितने कि होने चाहिए। बहुत कम विद्यालयों और विश्वविद्यालयों में शास्त्रीय नृत्यों को विषय के रूप में पढ़ाया जाता है। शास्त्रीय नृत्य से सम्बन्धित कलाकार भी काफी कम होते जा रहे हैं। वर्तमान समय में कुछ खास कार्यक्रमों को छोड़कर नृत्य के कार्यक्रमों का आयोजन नाममात्र ही हो रहा है। नृत्य व्यावसायिक दृष्टि से भी संगीत का एक महत्वपूर्ण अंग है, अतः नृत्य के अच्छे भविष्य एवं इसके विकास के लिए सार्थक प्रयासों का होना अत्यावश्यक है।

अगर संगीत के क्रियात्मक पक्ष के विकास की चर्चा की जाए तो मालूम होता है कि संगीत को उन्नत करने और जन–जन तक पहुंचाने में आकाशवाणी का योगदान बहुत ही महत्वपूर्ण है। आकाशवाणी के कलाकारों को व्यावसायिक दृष्टि से यहां अपने कार्यक्रम प्रस्तुत करने का अवसर दिया जाता है। परन्तु आकाशवाणी के कलाकारों को जो पारिश्रमिक दिया जाता है, इस हद तक कम होता है कि एक कलाकार उससे अपनी आधारभूत आवश्यकताएँ भी पूरी नहीं कर पाता। इसके साथ ही आकाशवाणी केन्द्रों में जो अधिकारी होते हैं, उनमें से अधिकतर का संगीत के साथ कोई सम्बन्ध नहीं होता, जबकि आकाशवाणी के अधिकतर प्रसारण संगीत पर ही मूल रूप से आधारित होते हैं। अतः संगीत के विद्वानों अथवा अधिकारियों को चाहिए कि वे इस प्रकार के स्थानों पर संगीत से सम्बन्धित विद्यार्थियों की नियुक्ति करवाने का प्रावधान बनाएं और इस प्रकार के विषयों के लिए सरकार से भी सहयोग के लिए आवेदन करें। इसी प्रकार का क्रम टैलिविजन आदि के विषय में भी अपनाया जाना चाहिए।

सही मायने में अगर संगीत के किसी पक्ष में विकास हुआ है, तो वह सुगम संगीत है। वाद्य के क्षेत्र में भी संगीत का काफी विकास देखने को मिलता है। संगीत से सम्बन्धित यह व्यवसाय भी काफी सार्थक सिद्ध हो रहा है। स्वतन्त्र अथवा एकल वादन और सहगायन वादन के माध्यम से बहुत से कलाकार अपनी आजीविका का अर्जन कर रहे हैं। इसके साथ ही वाद्यों से सम्बन्धित अनेकों कम्पनियाँ आज देश विदेश में अच्छा व्यवसाय कर रही हैं। विभिन्न प्राचीन वाद्यों के आधार पर नवीन वाद्यों का निर्माण किया जारहा है। सुगम संगीत में तो अनेकों विदेशी वाद्यों का प्रयोग इस प्रकार किया जा रहा

है कि आने वाले संगीत के विद्यार्थियों को केवल शास्त्रों में ही इनके विदेशी होने का प्रमाण मिलेगा, परन्तु व्यवहार में इनका प्रयोग देशी वाद्यों से अधिक होना अपेक्षित ही है। इसी प्रकार कुछ भारतीय वाद्य भी विदेशों में प्रचलित हो रहे हैं। दक्षिण भारत के एक कम्प्यूटर वैज्ञानिक तथा संगीतज्ञ ने विद्युतीय (इलैक्ट्रॉनिक) तबले तथा तानपूरे का निर्माण किया है। इन दोनों वाद्ययन्त्रों के निर्माण में यह विशेषतः ध्यान रखा गया है कि भारतीय शास्त्रीय संगीत के अनुकूल उनपर संगीत की रचना की जा सके। इन वाद्यों के आविष्कार से भारतीय संगीत के कलाकारों को संगीत साधना में बहुत सहायता मिली है और भविष्य में भी यह अपेक्षित ही है तथा संगीत के एक नवीन व्यवसाय का आविर्भाव भी हुआ है। संगीत से सम्बन्धित विद्यार्थी अच्छे वाद्यों के निर्माण में अपना योगदान देकर इस कार्य को बाजार में एक व्यवसाय के रूप में भी ग्रहण कर सकते हैं। संगीत के वाणिज्य अथवा व्यापारिक पक्ष में भी राष्ट्रीय तथा अन्तरराष्ट्रीय स्तर पर व्यवसाय की बहुत सम्भावनाएं हैं। इस संदर्भ में मुम्बई जैसे महानगरों में कई पाठ्यक्रमों का संचालन किया जा रहा है। वाणिज्य तथा व्यापार (कॉमर्स तथा एम0बी0ए0) से सम्बन्धित चल रहे पाठ्यक्रमों के अर्न्तगत संगीत एवं मनोरंजन में व्यापार के लिए विशेष प्रकार से प्रशिक्षण दिया जा रहा है और इसके लिए संगीत से सम्बन्धित विद्यार्थियों को शिक्षण अथवा प्रशिक्षण के लिए नियुक्त किया जाता है।

संगीत के सम्बन्ध में श्रेष्ठ पुस्तकें भी प्रकाशित होने लगी है। संगीत कला के विकास एवं व्यवसाय की दृष्टि से इनको शुभ लक्षण माना जा सकता है। क्योंकि जो विद्यार्थी अथवा शोधार्थी संगीत के क्रियात्मक एवं शैक्षणिक पक्ष में आजीविका कमाने में सफल नहीं हो पाते हैं, वे संगीत से सम्बन्धित पुस्तकों एवं पत्र पत्रिकाओं के प्रकाशन एवं प्रकाशन कार्यालयों में भी रोजगार जुटा सकते हैं अथवा स्वयं के प्रकाशन कार्यालय भी चला सकते हैं। इस प्रकार हम देखते हैं कि संगीत से सम्बन्धित अन्य भी अनेकों व्यवसाय के क्षेत्र हैं, जिनमें विद्यार्थी अपनी आजीविका को दक्षता एवं सम्मानपूर्वक ग्रहण कर सकते हैं। हमारे विद्यालयों एवं विश्वविद्यालयों में ऐसी कोई व्यवस्था विभाग स्तर पर नहीं है, जो संगीत से सम्बन्धित व्यावसायिक क्षेत्रों का ज्ञान विद्यार्थियों को करवाए। अतः देश व प्रदेश के साथ–साथ ऐसी व्यवस्था भी होनी चाहिए, जो विद्यार्थियों को विदेशों के अन्तर्गत होने वाले व्यावसायिक क्षेत्रों एवं सम्भावनाओं से अवगत करवा सके। शास्त्रीय संगीत का प्रचार–प्रसार करने के लिए उसके स्वरूप को विशिष्ट देश अथवा स्थान के अनुरूप परिवर्तित करने का भी अवसर प्रदान करना चाहिए, ताकि हमारा संगीत वहां पर एक उचित स्थान प्राप्त कर सके और व्यवसाय अथवा रोजगार के नवीन साधनों का विकास हो सके। इस संदर्भ में जनसंचार एवं मीडिया प्रौद्योगिकी–संस्थान कुरूक्षेत्र विश्वविद्यालय, कुरूक्षेत्र का प्रथम प्रयास सराहनीय है। संस्थान के अनुभवी, परिश्रमी एवं विवेकशील निदेशक प्रो0 बी0के0 कुठियाला ने इस दिशा में एक ऐतिहासिक एवं महत्वपूर्ण कदम उठाते हुए संगीत मीडिया एवं इलैक्ट्रानिक्स नाम से एक नवीन पाठ्यक्रम को संचालित किया है, जो भविष्य में संगीत को एक व्यावसायिक कार्य के रूप में ग्रहण करने वाले लोगों को तो रोजगार के उचित साधन प्राप्त करवाएगा ही, साथ ही संगीत एवं मीडिया से सम्बन्धित विद्यार्थियों को इन्जीनियरिंग, बिजिनेस मैनेजमैन्ट व मारकेटिंग के विद्यार्थियों की भाँति ही अनेक व्यवसाय उपलब्ध करा सकने में भी सक्षम हैं। यह विषय संगीत एवं मीडिया से जुड़े हुए व्यक्तियों को विश्वभर में स्थापित एवं संचालित बृहत् मनोरंजन उद्योग

की व्यावसायिक दृष्टि से सम्पूर्ण जानकारी करवाकर कलाकार एवं साधारण समाज के मध्य सम्बन्ध स्थापित करने के लिए तैयार करेगा। इस विशय के विद्यार्थी स्वयं संगीत के विभिन्न कार्यक्रमों की प्रस्तुति देने के साथ साथ मनोरंजन एवं तकनीकी संचार के अन्य क्षेत्रों, यथा रेडियो, दूरदर्शन, दूरदर्शन के अन्य सैकड़ों चैनलों[5] ऐड–कंपनियों[6] रिकॉडिंग स्टुडियो संगीत एवं मनोरंजन से सम्बन्धित सरकारी व गैर सरकारी कम्पनियों तथा राष्ट्रीय व अन्तरराष्ट्रीय व्यापारिक बाजारों, संगीत से सम्बन्धित वाद्ययन्त्रों का निर्माण करने वाली कम्पनियों, राष्ट्रीय व अन्तरराष्ट्रीय अथवा उच्च स्तर पर होने वाले कार्यक्रमों तथा संगीत एवं अन्य मनोरंजन से सम्बन्धित शैक्षणिक विषयों में भी रोजगार के अनेक साधनों को उपलब्ध कराने में सक्षम है। उपर्युक्त विषय के विद्यार्थियों को संगीत अथवा प्रसिद्ध कलाकारों की अमूल्य कृतियों को धरोहर के रूप में सुरक्षित करने का भी विशेष प्रशिक्षण दिया जाएगा। इसके परिणामस्वरूप वृद्ध एवं समृद्ध कलाकारों की अमूल्य कृतियाँ भावी पीढियों को उपलब्ध हो सकेंगी, जिनके आधार पर भावी कलाकार नित नवीन परीक्षण करके संगीत एवं मनोरंजन के क्षेत्र को समृद्ध करने में अपना योगदान दे सकेंगे। मनोरंजन के साथ साथ वर्तमान समय में संगीत को चिकित्सा विज्ञान के साथ भी जोड़ने के प्रयास किए जा रहे हैं। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए संगीत एवं योग को मिलाकर एक नवीन पाठ्यक्रम का निर्माण एवं संचालन किया गया है, जो भविष्य में साधारण समाज के लिए स्वास्थ्य से सम्बन्धित अनेकों सुविधाएं प्रदान करेगा और संगीत से सम्बन्धित विद्यार्थियों को व्यवसाय के नवीन क्षेत्र भी उपलब्ध कराएगा। विद्यालयों में संगीत की सामान्य शिक्षा के प्रावधान से कई लाभ होंगे, जिनमें सर्वोपरि यह होगा कि बच्चों के व्यक्तित्व का सर्वांगीण विकास सम्भव होगा जिससे समाज सु–संस्कृत होगा और मानवीय मूल्यों का पतन जो आज दिखाई देता है वह उत्कृष्ट अभिरूचि के विकास के साथ कुछ सीमा तक नियंत्रित हो सकेगा। भावी नागरिक अपनी मातृभूमि की संगीत कला से परिचित होंगे। यदि हम पं0 विष्णुदिगम्बर पलुस्कर व पं0 विष्णुनारायण भातखण्डे कू प्रयत्नों के प्रति श्रद्धावान् हैं तो आज हमें समाज की आवश्यकता को देखते हुए सभी विद्यालयों में भारतीय संगीत की सामान्य शिक्षा की समुचित व्यवस्था के लिए हर सम्भव प्रयास करना होगा। राज्य सरकारों के शिक्षा विभागों को इस दिशा में प्रयत्नशील होना चाहिए, जिससे हम सब इस लक्ष्य की प्राप्ति कर एक स्वर्णिम भविष्य की ओर अग्रसर हों एवं संगीत में व्यवसायिक दृष्टि से भी अनेकानेक अवसरों की प्राप्ति हो सके।

संदर्भ ग्रंथ

1. *भारत का इतिहास*–डॉ0 आर्शीवादी लाल श्रीवास्तव पेज **538**
2. *मध्यकालीन भारतीय कलाएँ और उनका विकास*–डॉ0 रामनाथ पेज **28**
3. डॉ0 मनोरमा शर्मा, *संगीत एवं शोध प्रविधि* पेज **23**
4. मा0 (संगीत हाथरस), गवालियर का ऐतिहासिक, सांगीतिक वैभव, सितम्बर 1986
5. Keval J. Kumar, *Mass Communication in India*, p. **213-214.**
6. *Advertising Principles and Practice*, Seventh edition, p. **255-258.**